TDC-III(H) Paper-V Dr. S. B. Kumar

संगठन के सिद्धांत (Principles of Organization)

(1.) पदसोपान का सिद्धांत (Hierarchy)

(2.) नियंत्रण का क्षेत्र सिद्धांत (Span of Control)

नहीं है।

7.5. संगठन की नियम-व्यवस्था (सिद्धांत) *(Principles of Organisation)*

संगठन से संबंधित कई नियम-व्यवस्थाएँ हैं जिन्हें सिद्धांत (Principles) के नाम से पुकारा जाता है। अनेक लेखकों ने ऐसे अनेक सिद्धांतों का विवेचन किया है। हेनरी फेयोल, लूथर गुलिक, जे० डी० मुने, एल० एफ० उरविक जैसे लेखकों ने प्रशासकीय संगठन के अलग-अलग सिद्धांतों की चर्चा की है। इन लेखकों के विचारों के आधार पर प्रशासकीय संगठन के मुख्य नियम-व्यवस्थाएँ या सिद्धांत (Process) बताए जा सकते हैं। वे हैं—पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया का सिद्धांत (Principle of Hierarchy or Scalar Principle), नियंत्रण का क्षेत्र (Span of control), सत्ता के प्रत्याधिकरण का सिद्धांत (Principle of Delegation of Authority), एकीकृत पद्धति (Integrated System), विकेंद्रीकरण की पद्धति (Decentralisation System), केंद्रीकरण की पद्धति (Centralisation System), समन्वय का सिद्धांत (Principle of Co-ordination), संचार सिद्धांत (Principle of Communication), आदेश की एकता (Unity of Command), पर्यवेक्षण का सिद्धांत (Principle of Supervision), प्राधिकार का सिद्धांत (Principle of Authority) इत्यादि। अब प्रत्येक नियम, व्यवस्था या सिद्धांत पर अलग-अलग विचार किया जाएगा।

7.6. पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया का सिद्धांत *(Principle of Hierarchy or Scalar Process)*

प्रशासकीय संगठन के कई सिद्धांत हैं, जिसमें पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया का सिद्धांत महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक बड़े संगठन में इस बात की नितांत आवश्यकता है कि उसमें काम करनेवाले अधिकारियों के पारस्परिक संबंधों का स्पष्ट ढंग से निर्धारण हो। वास्तव में, जब बहुत-से व्यक्ति कोई निश्चित उद्देश्य पूरा करने के लिए साथ-साथ काम करते हैं तो यह प्रश्न

Scanned with CamScanner

उठ जाना स्वाभाविक है कि उनमें कौन बड़ा है और कौन छोटा; कौन आज्ञा देनेवाला है और कौन आज्ञापालन करनेवाला। प्रशासकीय संगठन में भी यही बात होती है। यहाँ भी यह प्रश्न उठता है कि कौन प्रशासकीय अधिकारी बड़ा है, और कौन छोटा। प्रशासकीय संगठन की इसी समस्या के समाधान के लिए पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया के सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है।

पदसोपान का अर्थ है कि निम्नतर व्यक्तियों पर उच्चतर व्यक्ति द्वारा शासन हो। प्रशासकीय संगठन का रूप पिरामिड की तरह या पदसोपान की तरह है, जहाँ प्रत्येक पदासीन व्यक्ति अपने अधीनस्थ पर नियंत्रण रखता है। पदसोपान के अनुसार, प्रशासकीय संगठन के कर्मचारियों को कई भागों में बाँट दिया जाता है। प्रशासकीय संगठन के सबसे ऊपर, अर्थात् शिखर पर एक व्यक्ति होता है, और उसके नीचे अनेक भाग होते हैं। प्रत्येक भाग के अधिकार और कार्य निश्चित कर दिए जाते हैं। कार्यों की प्रकृति एवं विस्तार के अनुसार उसके कई स्तर बना दिए जाते हैं, जिनमें प्रत्येक अधीन व्यक्ति अपने से ऊपर के अधिकारी के प्रति उत्तरदायी होता है। इसी प्रकार उत्तरदायित्व क्रमिक स्तरों में बँटा रहता है। इस पद्धति में आज्ञाओं का सूत्र ऊपर से नीचे की ओर और उत्तरदायित्व का नीचे से ऊपर की ओर चलता है। इसी कारण, इसे क्रमिक प्रक्रिया का सिद्धांत भी कहा गया है। **डॉ० ह्वाइट** ने पदसोपान की परिभाषा इन शब्दों में दी है, "संगठन के ढाँचे में ऊपर से नीचे तक उत्तरदायित्व के स्तरों द्वारा जब उच्च तथा अधीनस्थ-जैसे संबंधों का व्यापक प्रयोग किया जाता है, तब वहाँ पदसोपान बन जाता है।"[1]

प्रशासन में इस पद्धति की बड़ी आवश्यकता है। इस पद्धति के बिना प्रशासन में कार्यकुशलता नहीं लाई जा सकती। जिस प्रकार दो-तीन सीढ़ियों को छोड़कर छलाँग लगाते हुए चढ़ने से गिरने का भय रहता है और क्रम भी भंग हो जाता है, उसी प्रकार प्रशासन में भी नियंत्रण एवं आदेश देते समय तथा उत्तरदायित्व का निर्वाह करते समय क्रमिक रूप से ही कार्य लिया जाना चाहिए, छलाँग लगाने की आवश्यकता नहीं। पत्र-व्यवहार या आवेदन के समय भी 'उचित माध्यम' (through proper channel) का सिद्धांत अपनाया जाता है। क्रम-भंग होने से प्रशासन में खतरे की संभावना बनी रहती है। पदसोपान अथवा क्रमिक प्रक्रिया की पद्धति को निम्नांकित चित्रों द्वारा अच्छी तरह समझा जा सकता है—

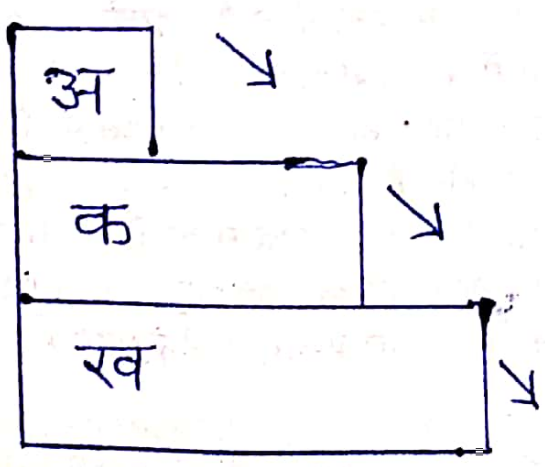

1. आदेश ऊपर से नीचे

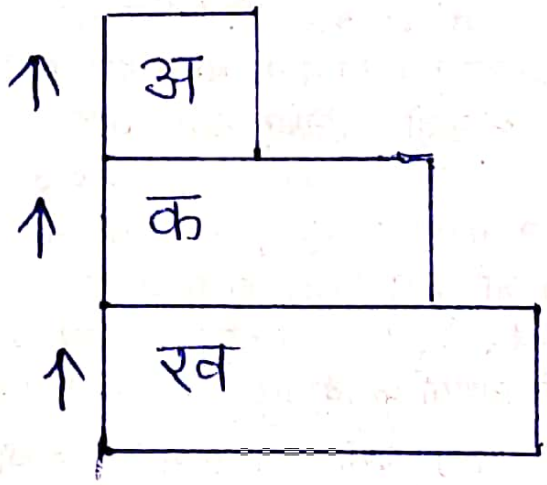

2. उत्तरदायित्व नीचे से ऊपर

Scanned with CamScanner

इन चित्रों से स्पष्ट हो जाता है कि सबसे शिखर पर प्रशासन का अध्यक्ष होता है। आदेश वहीं से नीचे की ओर उतरता है और उत्तरदायित्व ऊपर की ओर चढ़ता है। जैसे, चित्र 1 में 'अ' प्रशासन का अध्यक्ष है। 'क' उसके नीचे का अधिकारी है। 'ख' 'क' के नीचे का अधिकारी है, परंतु वह 'क' और 'अ' दोनों के प्रति उत्तरदायी है। 'अ' को यदि किसी कार्य के लिए 'ख' को आदेश देना होगा तो वह 'ख' को सीधे आदेश नहीं देकर 'क' के माध्यम से देगा। उसी प्रकार 'ख' को यदि किसी बात के लिए 'अ' से प्रार्थना करनी है, तो वह प्रार्थना भी 'क' के पास से होती हुई ही 'अ' के पास आनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, 'ख' 'क' के माध्यम से ही 'अ' के प्रति उत्तरदायी है। इसी बात को चित्र 2 द्वारा भी समझाया जा सकता है। इसी को पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया का सिद्धांत कहते हैं, जिसकी आवश्यकता प्रशासन में बहुत अधिक है।

प्रत्येक प्रकार के बड़े प्रशासकीय संगठन में पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया के सिद्धांत का महत्त्वपूर्ण स्थान है; क्योंकि इसके प्रयोग से कई उपयोगी परिणाम प्राप्त होते हैं। इस पद्धति से अनेक लाभ हैं, जिसका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है—

(i) इस पद्धति के द्वारा संगठन के सभी कर्मचारियों का उत्तरदायित्व निश्चित कर दिया जाता है। ऐसा करने से प्रशासन में कार्यकुशलता की वृद्धि होती है। इस पद्धति द्वारा संगठन को विभिन्न स्तरों में बाँटकर यह निश्चित कर दिया जाता है कि कौन किसके अधीन है। इस प्रकार, उत्तरदायित्व की स्थापना करने में किसी प्रकार की भ्रांति नहीं रह जाती।

(ii) मूने ने पदसोपान के सिद्धांत को विश्व का सर्वमान्य सिद्धांत कहा है। इस सिद्धांत का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसमें एकीकरण तथा पृथक्करण दोनों का समन्वय पाया जाता है। श्रमविभाजन के साथ-साथ एकीकरण की भी स्थापना इसके द्वारा की जा सकती है। डॉ० एम० पी० शर्मा के शब्दों में, "यह वह धागा है जिसके द्वारा विभिन्न भागों को एक साथ सी दिया जाता है।"[1] प्रशासकीय संगठन के लिए यह आवश्यक भी है। इस पद्धति से प्रशासन के सभी कर्मचारी एक सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मिलकर कोशिश करते हैं और इस प्रकार प्रशासकीय इकाइयों में समन्वय की स्थापना होती है। एक लेखक के शब्दों में, "प्रशासन में इसकी (पदसोपान की) वही उपयोगिता है, जो सीमेंट अथवा चूने की भवन-निर्माण में है।"

(iii) इस पद्धति से 'उचित मार्ग द्वारा' के सिद्धांत की स्थापना होती है। इससे सर्वोच्च अधिकारी के समय की बचत होती है, जिससे प्रशासन में कार्यकुशलता की वृद्धि होती है। अनेक बातों का निर्णय सर्वोच्च अधिकारी की जानकारी के पहले ही हो जाती है। इस पद्धति में सर्वोच्च पदाधिकारी के नीचे कई अधीनस्थ अधिकारी होते हैं और उनमें प्रत्येक को कुछ कम महत्त्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लेने का अधिकार होता है। अतः, बहुत-से कार्यों को नीचे के अधिकारियों द्वारा ही संपन्न कर लिया जाता है तथा कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण मामलों पर निर्णय लेने के लिए सर्वोच्च अधिकारी के पास भेजा जाता है। इस प्रकार, सर्वोच्च अधिकारी को विषयों के विस्तार में नहीं जाना पड़ता।

(iv) पदसोपान द्वारा संचार का भी मार्ग स्थापित होता है। संगठन के सभी कर्मचारी इस बात से पूर्ण परिचित हो जाते हैं कि उन्हें किस तरीके से कार्य करना है, अर्थात् किस प्रकार आगे बढ़ना है। प्रशासन में पदसोपान सूचना-माध्यम का भी कार्य करता है।

Scanned with CamScanner

(v) सर्वोच्च पदाधिकारी के लिए संभव नहीं है कि वह अपने सभी अधिकारों का प्रयोग अकेले करे, अतः वह अपनी कुछ शक्तियाँ अपने अधीनस्थ अधिकारियों को प्रदत्त कर देता है। ऐसी स्थिति में निम्न पदाधिकारी का उस कार्य के लिए उच्च पदाधिकारी के प्रति उत्तरदायित्व स्थापित हो जाता है। इस प्रकार, पदसोपान सत्ता तथा उत्तरदायित्व के प्रत्याधिकरण के सिद्धांत पर आधारित होता है। इससे प्रशासन में कार्यकुशलता बढ़ती है, क्योंकि किसी एक अधिकारी के पास अधिक काम का केंद्रीकरण नहीं होता।

(vi) इस सिद्धांत का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इस पद्धति में आदेश की एकता (unity of command) के सिद्धांत को पूर्ण मान्यता दी जाती है। एक प्रशासकीय कर्मचारी अपने तात्कालिक पदाधिकारी के अधीन ही कार्य करता है।

(vii) इस पद्धति से केंद्र तथा संगठन के दूरस्थ भागों में अच्छे ढंग से संबंध भी स्थापित किया जाता है। इस पद्धति से सब विभाग अच्छे ढंग से कार्य करने के लिए एक सूत्र में बँधे रहते हैं।

(viii) इस पद्धति में मुख्य कार्यपालिका का संबंध प्रशासन के प्रत्येक स्तर के साथ जंजीर की कड़ियों के समान स्थापित हो जाता है।

(ix) इस पद्धति में प्रत्येक कार्य एक निश्चित ढंग से होता है, अतः किसी भी अधिकारी की अवहेलना की संभावना नहीं रहती। प्रत्येक कर्मचारी यह जान जाता है कि संगठन में क्या प्रस्ताव किए गए हैं, तथा संगठन के विभिन्न विभागों में कौन-कौन-से काम हो रहे हैं।

(x) पदसोपान द्वारा इस बात का भी स्पष्टीकरण हो जाता है कि संगठन के विभिन्न पदों का पारस्परिक संबंध क्या है तथा किसे कितनी मात्रा में कार्य करना है। पदसोपान से होनेवाले लाभों का वर्णन करते हुए पॉल एच० एपलबी ने लिखा है, "पदसोपान वह साधन है जिससे स्रोतों का आनुपातिक प्रयोग किया जाता है; कर्मचारियों का चुनाव किया जाता है और उनको कार्य दिया जाता है। इससे प्रवर्तन को गति प्राप्त होती है, उसकी समीक्षा की जाती है तथा उसमें संशोधन किए जाते हैं।"

इस प्रकार, हमलोगों ने पदसोपान के सिद्धांत एवं उपयोगिता पर विचार किया, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि यह सिद्धांत दोषों से मुक्त है और इसकी अपनी कोई समस्या नहीं है। सही बात यह है कि इस सिद्धांत के भी कुछ दोष और समस्याएँ हैं, जिन्हें इस प्रकार गिनाया जा सकता है—

(i) इस सिद्धांत का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें उच्च अधिकारी तथा अधीनस्थ कर्मचारी-जैसे संबंध पैदा हो जाते हैं। प्रशासन में इस तरह के भेद की भावना से अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जिससे प्रशासन के कार्य में बाधा उपस्थित होती है।

(ii) इस सिद्धांत का कठोरता से पालन करने पर प्रशासकीय कार्यों के संपादन में देर होने का भय रहता है। उचित मार्ग द्वारा कार्यवाही संपन्न होने के कारण कार्य में देर होती है और लालफीताशाही का जन्म होता है। कार्य में इस कारण देर होती है कि प्रत्येक विषय को संगठन की प्रत्येक सीढ़ी पार करनी पड़ती है।

(iii) इस पद्धति से जनता में प्रशासन के प्रति असंतोष की भावना जाग्रत होती है। संगठन का रूप अत्यधिक जटिल बन जाता है, जिससे सामान्य जनता उसे समझने में असमर्थ रहती है। केवल विशेषज्ञ ही उस जटिलता को समझ पाते हैं और इसके कारण वे इसका अनावश्यक रूप से लाभ उठाने की कोशिश करते हैं।

Scanned with CamScanner

पदसोपान के इन दोषों का यह अर्थ नहीं है कि सिद्धांत ही बेकार है। इस सिद्धांत के दोषों और समस्याओं से बचने के उपाय भी हैं। लोकप्रशासन के विद्वानों ने इसके लिए दो उपायों का उल्लेख किया है। पदसोपान या क्रमिक प्रक्रिया के दोषों से मुक्ति पाने के लिए फयोल ने एक उपाय बताया है। इनके अनुसार, पदसोपान की शक्ति का औपचारिक पंक्तियों में होकर एक पुल बना देना चाहिए, जिससे एक विभाग के अधीनस्थ अधिकारी दूसरे विभाग के कर्मचारियों से सीधा संपर्क स्थापित कर सकें। अंतरविभागीय संबंध की स्थापना से सुविधा हो जाती है और समय की भी बचत होती है। पदसोपान की कठिनाई दूर करने के लिए दूसरा उपाय यह है कि हमेशा लघु मार्गों का अनुसरण किया जाए। दूसरे शब्दों में, एक ही विभाग के दो अधिकारी अपने मध्यस्थ के द्वारा संबंध स्थापित नहीं करके सीधा संपर्क स्थापित कर सकते हैं, परंतु इसके लिए दो बातों का ख्याल रखना पड़ेगा। पहली बात यह है कि दोनों अधिकारियों के बीच जो भी वार्ता या निर्णय हो, उसकी जानकारी मध्यस्थ अधिकारी को भी हो जानी चाहिए। दूसरे, सीधा संपर्क स्थापित करते समय मध्यस्थ अधिकारी का पूरा विश्वास प्राप्त रहना चाहिए। इस प्रकार, सत्ता का उल्लंघन तथा हनन किए बिना ही 'लघु मार्गों' का अनुसरण करना चाहिए। ऐसा करने से पदसोपान की समस्याओं को हल किया जा सकता है और पदसोपान की व्यवस्था को बनाए रखा जा सकता है। वास्तव में, पदसोपान संगठन की कार्यकुशलता स्थापित करने का एक साधन मात्र है, अतः संगठन के शीघ्र एवं कुशल कार्यसंचालन के लिए सीधा संपर्क स्थापित करना अनुचित नहीं होगा। अंत में, इस सिद्धांत की उपयोगिता, महत्ता एवं उसके सही प्रयोग के संबंध में एल० उरविक के विचार से पूर्ण सहमति प्रकट की जा सकती है। उनके अनुसार, "प्रत्येक संगठन में औपचारिक क्रमिक शृंखला ठीक उसी प्रकार होनी चाहिए, जिस प्रकार एक घर में नालियाँ होती हैं। परंतु, इस मार्ग को संचार के एकमात्र साधन के रूप में प्रयुक्त करना उसी प्रकार अनावश्यक है, जिस प्रकार व्यक्ति के लिए मकान की नालियों में समय बिताना अनावश्यक है।"[1]

7.7. नियंत्रण का क्षेत्र *(Span of Control)*

संगठन से संबद्ध एक अन्य सिद्धांत है, जिसका संबंध नियंत्रण के क्षेत्र से है। नियंत्रण के क्षेत्र का संबंध इस बात से है कि एक उच्च पदाधिकारी अपने अधीन कितने कर्मचारियों पर नियंत्रण रख सकता है। नियंत्रण का अर्थ यह देखना है कि प्रत्येक कार्य निर्धारित नियमों तथा दिए गए अनुदेशों के अनुसार किया जा रहा है या नहीं। नियंत्रण के क्षेत्र का अर्थ है कि एक उच्च पदाधिकारी थोड़े से अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्यों पर ही नियंत्रण रख सकता है। लोकप्रशासन के प्रसिद्ध विद्वान डिमॉक ने नियंत्रण के क्षेत्र का अर्थ इन शब्दों में स्पष्ट किया है, "नियंत्रण का क्षेत्र किसी उद्यम की मुख्य कार्यपालिका और उसके प्रमुख सहयोगी कार्यालय के बीच सीधे तथा सामान्य संचार की संख्या एवं क्षेत्र है।"[2] नियंत्रण के सिद्धांत के अनुसार बड़े-बड़े और बुद्धिमान व्यक्ति की क्षमता भी सीमित होती है। प्रत्येक व्यक्ति के ज्ञान की एक सीमा होती है। अपनी क्षमता और ज्ञान के अनुसार ही वह कार्य

Scanned with CamScanner

करने में समर्थ हो सकता है। उससे ज्यादा कार्य लेने पर कार्य में गड़बड़ी हो जाने का भय बना रहता है। अतः, इस बात की अत्यधिक आवश्यकता है कि एक पदाधिकारी को जिन अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियंत्रण रखना है, उनकी संख्या निश्चित कर दी जाय। इस सिद्धांत को अच्छी तरह लागू करने पर ही प्रशासन में कार्यकुशलता और ईमानदारी में वृद्धि की जा सकती है।

इस संबंध में सबसे बड़ी समस्या यह है कि नियंत्रण के क्षेत्र की सीमा किस प्रकार निश्चित की जाए। इस संबंध में लोकप्रशासन के विद्वानों में एक मत नहीं है। कुछ विद्वानों के मतानुसार नियंत्रण का क्षेत्र कम रखना भी कम खतरनाक नहीं है। **सेकलर हडसन** के मतानुसार, "नियंत्रण का क्षेत्र अत्यंत सीमित कर देने पर भी कई खतरे उत्पन्न हो सकते हैं; जैसे—जितने भी प्रतिवेदन आएँगे उनका विस्तार से निरीक्षण होगा, अधीनस्थों को उनकी क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग करने के लिए प्रोत्साहन देने में पूर्ण असफलता प्राप्त होगी। इसके अलावा, यह भी संभव है कि छोटे नियंत्रण के क्षेत्र का अर्थ आज्ञा देनेवालों की संख्या बढ़ाना होगा।"[1] परंतु, अधिकतर विद्वानों ने यह माना है कि नियंत्रण के क्षेत्र की संख्या सीमित ही हो। संख्या के संबंध में विद्वानों में गहरा मतभेद है। अमेरिका के सैनिक-सेवा के प्रभावशाली सैनिक **सर हैमिल्टन** का कहना है कि एक उच्च पदाधिकारी तीन या चार कर्मचारियों के कार्यों पर ठीक ढंग से नियंत्रण रख सकता है। **एल० उरविक** के मतानुसार, "उच्च पदाधिकारियों के लिए यह संख्या चार होनी चाहिए और उनलोगों के लिए जो निम्न पदाधिकारी हैं, आठ या बारह।" **हेनरी फेयोल** का कहना है कि "एक बड़े उद्यम के शिखर पर स्थित प्रबंधक को अपने अधीन पाँच या छः से अधिक कर्मचारी नहीं रखने चाहिए।" **वालास** ने इस संख्या को 20 तक पहुँचाया है। इस प्रकार, नियंत्रण के क्षेत्र की आदर्श संख्या तय नहीं हो सकी है, फिर भी सभी विद्वान इस विचार से सहमत हैं कि नियंत्रण के क्षेत्र को जितना सीमित कर दिया जाएगा, यह उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा और संगठन में संपर्क उतना ही अधिक होगा। वास्तव में, नियंत्रण किए जाने वाले लोगों की संख्या का कम किया जाना अपने-आपमें एक अच्छाई है।

नियंत्रण के क्षेत्र को कई तत्त्वों द्वारा भी निर्धारित किया जा सकता है। **लूथर गुलिक** के अनुसार, ऐसे तत्त्वों की संख्या तीन है—कार्य, समय तथा स्थान। यदि एक अधिकारी को समान कार्य करने वालों पर ही नियंत्रण रखना है, तो उसके नियंत्रण का क्षेत्र बड़ा हो सकता है, परंतु विभिन्न तरह के कार्य करनेवालों पर नियंत्रण रखने की अवस्था में उनके नियंत्रण का क्षेत्र सीमित होना चाहिए। इसे उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। यदि इंजीनियर को इंजीनियरों पर तथा डॉक्टर को डॉक्टरों पर नियंत्रण रखना है तो उनके नियंत्रण का क्षेत्र बड़ा भी हो सकता है। दूसरी ओर, यदि एक इंजीनियर को चिकित्सा और शिक्षा से संबद्ध कर्मचारियों पर भी नियंत्रण रखना है, तो उसके लिए नियंत्रण का क्षेत्र छोटा ही होना चाहिए। नियंत्रण के क्षेत्र का निर्धारण समय द्वारा भी किया जा सकता है। पुराने तथा स्थायी संगठन का नियंत्रण-क्षेत्र बड़ा हो सकता है, परंतु नए संगठन का नियंत्रण-क्षेत्र छोटा होना चाहिए। स्थान द्वारा भी नियंत्रण का क्षेत्र निर्धारित किया जा सकता है। यदि किसी पदाधिकारी को ऐसे अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियंत्रण रखना है, जिनके कार्यालय भौगोलिक दृष्टिकोण से दूर-दूर तक फैले हुए हैं, तो उसके नियंत्रण का क्षेत्र छोटा ही होना उचित होगा।

Scanned with CamScanner

इन तीनों तत्त्वों के अतिरिक्त नियंत्रण का क्षेत्र पदाधिकारी की शक्ति तथा व्यक्तित्व पर भी निर्भर करता है। जिस पदाधिकारी का व्यक्तित्व जितना उच्च होगा, उसके नियंत्रण का क्षेत्र भी उतना ही विस्तृत हो सकता है। इस प्रकार, स्पष्ट है कि नियंत्रण के क्षेत्र पर कई तत्त्वों का प्रभाव पड़ता है।

नियंत्रण के क्षेत्र की संख्या की समस्या पर विचार करने के बाद नियंत्रण के क्षेत्र के सिद्धांतों का संक्षेप में इस प्रकार से वर्णन किया जा सकता है—

(i) यह बात माननी पड़ेगी कि प्रत्येक पदाधिकारी के कार्य करने की क्षमता की एक सीमा होती है, चाहे वह कितना भी योग्य और बुद्धिमान क्यों न हो। वास्तव में, मानवीय ज्ञान की कुछ सीमाएँ होती हैं।

(ii) सभी कर्मचारियों को अपने से संबद्ध नियंत्रण के क्षेत्र के अंतर्गत ही कार्य करना पड़ता है।

(iii) सक्रिय नियंत्रण-क्षेत्र उसे कहते हैं, जिसके आगे कोई भी कार्यवृद्धि करने से कार्य में देर तथा उसके बारे में भ्रम उत्पन्न हो।

(iv) जितनी अधिक योग्यता होती है तथा जितना बड़ा उत्तरदायित्व होता है, उसी के अनुपात में सक्रिय नियंत्रण-क्षेत्र भी होता है।

(v) एकरूपीय संगठन की अपेक्षा एक बड़े, विविध रूपवाले तथा बिखरे हुए संगठन में अधीनस्थ कर्मचारियों की संख्या कम होती है।

(vi) अब तक लोकप्रशासन के विद्वान इसपर एकमत नहीं हो सके हैं कि नियंत्रण के क्षेत्र का विस्तार कितना हो। फिर भी, अधिकतर विद्वानों ने यह माना है कि प्रशासकीय कार्यकुशलता के लिए नियंत्रण का क्षेत्र सीमित रहना ही ज्यादा अच्छा है। इस संबंध में **साइमन** का मत एकदम सही है। उसके मतानुसार, "एक प्रशासक को सीधी रिपोर्ट देनेवाले अधीनस्थों की संख्या कम कर दी जाए तो प्रशासकीय कार्यकुशलता बढ़ जाएगी।"[1]

नियंत्रण के क्षेत्र की उपर्युक्त विवेचना से ही प्रशासन को संगठित करने में इस सिद्धांत की महत्ता स्पष्ट हो जाती है। वास्तव में, इस सिद्धांत का पदसोपान की व्यवस्था से घनिष्ठ संबंध है। यह बात भी इसी सिद्धांत के आधार पर तय होती है कि एक संगठन के पिरामिड में कितने स्तर होने चाहिए। इस प्रकार, प्रशासन को संगठित करने में इस सिद्धांत से काफी सहायता मिलती है। **फिफनर** तथा **शेरवुड** का ठीक ही कहना है कि "नियंत्रण का क्षेत्र प्रशासकीय संस्कृति से इतना घिरा हुआ है कि संगठन की किसी भी पुस्तक में इसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।"[2]

Scanned with CamScanner